Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

DONATION

मन्त्रों के ऋषि

ASG

R
14·3
PAR-M

स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक, विद्यामार्तण्ड

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या............ आगत संख्या............

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

R
14.3
PARm

प्रथमावृत्ति] १९७४ इ० फरवरी [मूल्य ७० पैसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

9304

ब्रह्ममुनि-ग्रन्थमाला सं० ७४

आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति
भूतपूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी
विश्वविद्यालय

मन्त्रों के ऋषि

R14.3,PAR-M
9304
पुस्तकालय

लेखक एवं प्रकाशक

स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक विद्यामार्तण्ड

आर्य वानप्रस्थाश्रम, ज्वालापुर जि. सहारनपुर

पुस्तक प्राप्ति स्थान

आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर

२०३० वि० फाल्गुन

प्रथमावृत्ति] १९७४ ई० फरवरी [मूल्य ७० पैसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्रों के ऋषि

मन्त्रों सूक्तों और अध्यायों पर ऋषि लिखे रहते हैं, वे उनके कर्त्ता हैं या द्रष्टा हैं इसका विवेचन एवं निर्णय करते हैं।

कर्तृवाद पक्ष—"यस्य वाक्यं स ऋषिः" [ऋक्सर्वानुक्रम० १।२।४]

जिसका वाक्य होता है वही उसका ऋषि होता है।

विवेचन—यह कथन कर्तृसम्बन्ध से है या स्वामिसम्बन्ध से है, स्वामिसम्बन्ध से भी ऐसा व्यवहार होता है जैसे "देवदत्तस्य गृहम्" "यज्ञदत्तस्य गौः" अर्थात् देवदत्त का घर यज्ञदत्त की गौ ऐसे ही जिसका वाक्य जो वाक्य का स्वामी है वह ऋषि है। स्वामिसम्बन्ध में प्रमाण है—"ऋषिभ्यः .... मन्त्रपतिभ्यः .... [ऐ. आरण्यक १।१।१]

कर्तृवाद पक्ष — (क) "कारुरहमस्मि — कर्तास्तोमानाम्" [निरु. ६।५] कारु मैं हूँ—कर्त्ता स्तोमों का।

(ख) "ऋषे मन्त्रकृतां स्तोमैः" [ऋ. ९।११४।२] हे ऋषि ! मन्त्र करनेवालों के स्तोमों से।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवेचन—इन वचनों में कृधातु के प्रयोग को देख कर कर्तृवाद की कल्पना की जाती है परन्तु कृधातु का अर्थ करना ही नहीं है किन्तु "कृ"धातु के अनेक अर्थ हैं—

करोतिरभूतप्रादुर्भावे, दृष्टो निर्मलीकरणे चापिवर्त्तते पृष्ठं कुरु पादौ कुरु। उन्मृदानेति गम्यते। निक्षेपणे चापि वर्त्तते—कटे कुरु घटे कुरु, अश्मानमितः कुरु। स्थापयेति गम्यते [व्याकरण महाभाष्य १।३।१]

इसलिए "कर्त्ता स्तोमानामित्यादि वचनों में कृ धातु बनाने अर्थ में अभीष्ट नहीं है किन्तु प्रयोग करने के अर्थ में है—

"स्तोमानां कर्त्ता स्तोमकर्त्ता स्तुतीनां प्रयोक्ता यज्ञ कर्मणि" [इति दुर्गाचार्यः निरु. ६।५]

कृ धातु का अर्थ पढ़ना भी है मन्त्रकृत् या मन्त्रकारःशब्द मन्त्र पढ़ने वाले के लिए आता है जैसे—

"पश्चादग्नेश्चत्वार्यासनान्युपकल्पयीत तेषूपनिविशन्ति। पुरस्तात्प्रत्यङ् मुखोदाता पश्चात् प्राङ्मुखः प्रतिग्रहीता दातुरुत्तरतः प्रत्यङ्मुखी कन्या दक्षिणत उदङ्मुखो मन्त्रकारः [वाराह-गृह्यसूत्र खण्ड १३]

इस वचन में विवाहसंस्कार में वेदि के दक्षिण भाग में उत्तर को मुख करके मन्त्र पढ़ने वाले को बैठने का आदेश है। यहाँ "मन्त्रकार" का अर्थ मन्त्र पढ़ने वाले का है। इससे यह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्पष्ट हो जाता है कि 'मन्त्रकार' या 'मन्त्रकृत' शब्द को कहीं प्रयुक्त देखकर मन्त्र बनाने वाला अर्थ लेकर कर्तृवाद के सन्देह में पड़ जाना ठीक नहीं है किन्तु मन्त्रकार या मन्त्रकृत् का अर्थ मन्त्र पढ़ने वाले का है। अस्तु।

अतः "ऋषिभ्यो मन्त्रकृद्भ्यो मन्त्रपतिभ्यः" [ऐ. आ. १।१।१] इस वचन में मन्त्रकृत् मन्त्र पढ़ने वाले और मन्त्रपति मन्त्र के द्रष्टा अर्थ में हैं।

कर्तृवाद पक्ष में आपत्ति—

(क) क्वचित् क्वचित् मन्त्रों के ऋषि नदी, पर्वत, सूर्य की चक्षु, कूर्म, मत्स्य, शङ्ख, कपोत, श्येन, ऋषभ हैं। क्या ये पदार्थ भी कभी मन्त्रों के कर्त्ता हो सकते हैं ?

(ख) किन्हीं-किन्हीं मन्त्रों के ऋषि कुमार, आयु आदि अवस्था और विशेषणवाचक भी हैं। कर्तृवाद पक्ष में इनका ऋषि होना किस प्रकार सम्भव है ?

(ग) कहीं कहीं पर क्रिया विधायक शब्द भी ऋषि हैं। यथा— ऋ. १०।१२४।१, ५–८ का ऋषि "अग्निवरुणसोमानां निहवः" अग्नि, वरुण, सोम की निमन्त्रण क्रिया यहाँ ऋषि है तथा साम पू. ५।२।५।९ का "वाजिनां स्तुतिः" घोड़ों की स्तुति ऋषि है। इस प्रकार इन भाववाचक शब्दों का मन्त्रकर्त्ता ऋषि बनना कैसे हो सकता है ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(घ) क्वचिद्-क्वचिद् मन्त्रों में मनुष्यों की वाञ्छनीय भावनाओं के वाचक शब्द ऋषि हैं। यथा--श्रद्धा ऋषि, स्वस्ति ऋषि, शिवसङ्कल्प ऋषि।

(ङ) रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः। [ऋ. १०।१२७।१] समुद्रादूर्मि मुदियर्ति वेनो नभोजाः पृष्ठं हर्यतस्य दर्शि। [ऋ. १०।१२३।२]

इन मन्त्रों में आकाश में वर्तमान रात्रि और वेन (आदित्य) को ऋषि कहा है। क्या ये भी किसी प्रकार मन्त्रों को बना सकते हैं ?

(च) एक ही मन्त्र का संहितान्तर में ऋषिभेद भी पाया जाता है यथा—"ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् विसीमतः सुरुचो वेन आवः" [यजु. १३।३, साम. [पृ. ४।१।३।९]

यजुर्वेद में इसका ऋषि वत्सारः (अवत्सारः) और देवता आदित्य है। परन्तु सामवेद में ऋषि गातु, देवता इन्द्र है। कर्तृवाद में ऐसा ऋषि-भेद कैसे सम्भव हो सकता है ?

(छ) "मूर्धन्वानांगिरसो वामदेव्यो वा" [ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी ६०]

कर्तृवाद में सन्दिग्ध ऋषि विधान का क्या अवसर।

(ज) ऋषि—"भार्गवः प्रयोगो बार्हस्पत्यो वाग्निः सहसः सुत-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योर्वाग्न्योर्गृहपति यविष्ठयोर्वान्यतरः (ऋ० ८।१०२)
[ऋग्वेदीयासर्वानुक्रमणी । ४७]

यहाँ तो सन्देह की सीमा ही नहीं रही। क्या कर्तृवाद में इतना सन्देह उचित है ?

(झ) ऋ० १०।१३४ के छठे मन्त्र के पूर्वार्ध का ऋषि "मान्धाता-यौवनाश्वः" है और उत्तरार्द्ध का "गोधा" है, एक ही मन्त्र के दो बनाने वाले हों यह कैसी बालक्रीड़ा है ?

(ञ) "ऋषि—शतं वैखानसः" [ऋ० ९।६६] (ऋग्वेदीया-सर्वानुक्रमणी । ५०)

मन्त्र कुल सूक्त में ३० हैं और बनाने वाले ऋषि हैं १००, यह तो कर्तृवाद में एक बाजीगर का तमाशा सा है।

(ट) "प्रस्कण्व ऋषिः । उषो देवता"

उषो ये ते प्रयामेषु युञ्जते मनो दानाय सूरयः । अत्राह-तत्कण्व एषां कण्वतमो नाम गृणाति नृणाम् ॥
[ऋ० १।४८।४]

मन्त्रों में आये हुए कण्व आदि नाम यदि मन्त्र कर्त्ता ऋषि माने जावें तो यह 'कण्वतमः' में कण्व के आगे 'तमप्' प्रत्यय का प्रयोग किस प्रकार हो सकता है ? "अतिशायने तमबिष्ठनौ" [अष्टा० ५।३।५५] क्योंकि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संज्ञावाचक शब्दों में अपेक्षाकृत अतिशयता की तुलना नहीं बन सकती है इत्यादि।

(ठ) "ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म। अग्निर्देवता। ब्रह्म इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दः।" [तैत्तिरीयारण्यक। प्र० १०। अनु० ३३] "ओ३म्" यह एकाक्षर का ब्रह्म (मन्त्र) है। इसका अग्नि देवता है, ब्रह्म ऋषि है और गायत्री छन्द है।

उपर्युक्त वचन में "ओ३म्" का ऋषि ब्रह्म बतलाया है। ब्रह्म नाम का कोई मनुष्य ऋषि "ओ३म्" का बनाने वाला नहीं हो सकता।

कर्तृवाद पक्ष—मन्त्रों के जो जो ऋषि हैं उनका क्वचित् मन्त्रों में नाम आ जाता है जो कि कर्तृवाद में ही सम्भव होने से कर्तृवाद पक्ष का साधक है क्योंकि कर्त्ता अपने नाम को अपने बनाये मन्त्र में डाल सकता है। अतः मन्त्रों के ऋषियों का कर्तृवाद पक्ष ही मानना ठीक है ऐसा ऐतिहासिकों का कथन है।

विवेचना—उपर्युक्त कथन ठीक नहीं है। ऐतिहासिक ऋषियों का नाम मन्त्रों में नहीं है किन्तु मन्त्रों में उन उन नामों को देखकर गुणवशात् उन उन ऋषियों का नाम पड़ गया, रख दिया या रख लिया गया है। कारण—

"ऋषीणां नामधेयानि याश्च वेदेषु दृष्टयः।
शर्वर्यन्ते प्रसूतानां तान्येवैभ्यो ददात्यजः" ॥ [महाभारत]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों के जो जो नाम और वेदों में जो जो उनकी दृष्टियाँ अर्थात् विद्याविषयक योग्यताएं हैं कि अमुक अमुक विद्या विषय, ज्ञान से अमुक अमुक नाम के ऋषि कहला सकेंगे, यह सब शर्वरी अर्थात् प्रलय के अन्त में आरम्भ-सृष्टि में ही वह अजन्मा ईश्वर देता है। शर्वरी प्रलय का नाम है "कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती" [सूर्य सिद्धान्त १।२०]

उपर्युक्त महाभारत के वचन में तीन बातें कही गई हैं। ईश्वर की ओर से वेदों की रचना, दूसरे प्रलय के अन्त अर्थात् आरम्भ सृष्टि में उक्त वेदों का प्रकाशित होना, तीसरे ऋषियों की दृष्टियाँ अर्थात् तत्तद्विषयक योग्यताएँ और तदनुसार उनके नाम आरम्भ सृष्टि में ही नियत हुए।

5361

अतः ऋषि मन्त्र कर्त्ता नहीं मन्त्रद्रष्टा हैं, इसमें प्रमाण-द्रष्टृवाद—विश्वामित्रः स तृतीयं मण्डलमपश्यत्।

[ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी]

वामदेवो गौतमश्चतुर्थं मण्डलमपश्यत्।

[ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी। २०]

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः षष्ठं मण्डलमपश्यत्।

[ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी। २८]

सप्तमं मण्डलं वसिष्ठोऽपश्यत्।

[ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी। ३३]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्जन्याय तृचं गायत्रम् ,एते कुमार आग्नेयोऽपश्यद् वसिष्ठ एव वा वृष्टिकामः ।

[ऋग्वेदीया सर्वानुक्रमणी ।४०]

वेनस्तत् , इति त्रैष्टुभं ब्रह्मात्मदैवतं वेनोऽपश्यत् ।

[अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणी । २।१]

इन्द्राय सोममिति तृचोऽथर्वाऽपश्यत् ।

[अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणी अथ० ६।२]

शमीमश्वत्थ इति प्रजापतिरपश्यत् ।

[अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणी । ६।१।११]

ऋषिर्दर्शनात् स्तोमान् ददर्शेत्यौपमन्यवः ।
तद्यदेनांस्तपस्यमानान् ब्रह्म स्वयम्भ्वभ्यानर्षत् ।
त ऋषयोऽभवंस्तदृषीणामृषित्वमिति विज्ञायते ॥

[निरुक्त । २।११]

ऋषिर्दर्शनात् पश्यति ह्यासौ सूक्ष्मानप्यर्थान् ।
ब्रह्म ऋग्यजुः सामाख्यं स्वयम्भु अकृतकमभ्यानर्षदभ्यागच्छत् ॥

[दुर्गाचार्यः । निरुक्त १।११]

उपर्युक्त वचनों में द्रष्टावाद पक्ष को स्वीकार किया है। निरुक्त के "स्वयम्भु ब्रह्म" इस वचन से तो वेद अपौरुषेय ही सिद्ध होता है दुर्गाचार्य ने भी 'ब्रह्म ऋग्यजुःसामाख्यं स्वयम्भु अकृतकम्' से उक्त अभिप्राय ही सिद्ध किया है इससे तो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तृवाद पक्ष निराकृत ही हो जाता है। आचार्य देवपाल ने भी इस विषय में पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष पूर्वक विचार किया है। उन्होंने लौगाक्षि गृह्यसूत्र के भाष्य में 'ओं भूः। ओंभुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम्'। इन सातमन्त्रों के ऋषि कौन हैं यह विचार करने के लिए प्रथम शौनकाचार्य का वचन "ऋषिराद्यः प्रजापतिः" दिया है। पुनः एक और आचार्य का निम्न वचन भी उद्धृत किया है—

विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गौतमः।
ऋषिरत्रिर्वसिष्ठश्च कश्यपश्चयथाक्रमम्॥

इस वचन में विश्वामित्र आदि ऋषि यथाक्रम बतलाये हैं। अब उक्त 'ओं भूः' आदि के ऋषियों के सम्बन्ध में आचार्य देवपाल के सम्मुख दो पक्षों की एक विचारणीय समस्या उपस्थित हो गई। इसका निर्णय वे करते हैं कि—"युज्यन्ते चैकत्रानेके द्रष्टारः कालभेदेन युगपच्च" कालभेद से या एक साथ एकमन्त्र के अनेक द्रष्टा ऋषि हो सकते हैं। आचार्य देवपाल के इस कथन से तो द्रष्टृवाद ही सिद्ध होता है। कर्तृवाद में तो यह समाधान सङ्गत हो नहीं सकता।

प्रश्न—मन्त्रों में जो कहीं कहीं ऋषि नाम आते हैं वे द्रष्टृवाद में कैसे सम्भव हैं। द्रष्टा तो पश्चात् कालीन है?

उत्तर—द्रष्टा ऋषि उपाधिकृत या यौगिक नाम हैं। छान्दोग्योपनिषद में कहा है—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदार्षेयं तमृषिं यां देवतामभिष्टोष्यन् स्यात्तां देवतामुपधावेद्येन छन्दसा स्तोष्यन् स्यात्तच्छन्द उपधावेत् ॥

[छान्दो० १।३।९।१०]

इस वचन में यह कहा गया है कि वेद का विद्यार्थी मन्त्रों के ऋषि, देवता और छन्दों को लक्ष्य में रखता हुआ योग्यता सम्पादन करे।

विदित हो कि उक्त वचन योग्यता सम्पादन करने के लिए ऋषि को जो लक्ष्य में रखना कहा है वह उपाधि रूप से ही अभीष्ट है, क्योंकि देवता और छन्द को तो योग्यता-सम्पादन करने के लिए लक्ष्य में रखना आवश्यक है परन्तु ऋषि का लक्ष्य में रखना तो उपाधि से ही सम्भव है। कर्तृवाद से किसी रूढ़ नामवाले रचयिता का योग्यता सम्पादन के लिए लक्ष्य में रखना आवश्यक नहीं है किन्तु उपाधिरूप ऋषि का तो लक्ष्य में रखना योग्यता सम्पादन का एक अङ्ग है। जैसे आजकल भी विद्यालयों, गुरुकुलों तथा कॉलेजों में विद्यार्थी लोग शास्त्री, वेदालङ्कार, विद्यावाचस्पति, न्यायतीर्थ, व्याकरणाचार्य, वेदरत्न आदि—उपाधियों को अपने अध्ययन के साथ लक्ष्य में रखते हैं क्योंकि—उपाधि, विषय और पाठ्य (कोर्स) निश्चित ग्रन्थ इन तीनों का ध्यान रखना अत्यावश्यक है। एवं वेद के विद्यार्थी को ऋषि (उपाधि), देवता—(विषय) छन्द (निश्चित ग्रन्थ भाग) "छन्दोभाषाधर्मः" अर्थात् अनेक पदों का भाषाविन्यास छन्द है। इन तीनों को ध्यान में रखना उचित है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सायणाचार्य से पूर्व वेदभाष्यकार स्कन्द स्वामी ने लिखा है—

"तत्रार्ष दैवतयोः अर्थ बोधने उपयुज्यमानत्वात् ते दर्शयिष्येते" मन्त्रार्थबोध में ऋषि देवता का उपयोग होने से वे दिखाये जायेंगे।

[ऋग्वेदभाष्य स्कन्दस्वामी]

इसलिए ऋषियों का औपाधिक या यौगिक नाम होने से मन्त्रों में आ जाने पर कोई आपत्ति नहीं है। ऋषियों के यौगिक होने में निम्न प्रमाण हैं—

(१) ऋषिः कुत्सो भवति कर्त्ता स्तोमानाम्" [निरु० ३।११] कुत्स ऋषि का नाम है स्तोमों का प्रयोगकर्त्ता होने से।

(२) "कनिक्रदज्जनुषं····" [ऋ० २।४२।१] पर गृत्समद के प्रसङ्ग में "गृत्समदः—गृत्समदनः—गृत्स इति मेधाविनाम" [निरु० ९।५] मेधावी और हर्षालु 'गृत्समद' हुआ।

(३) "इमं तं पश्य वृषभस्य।" [ऋ० १०।१०२।९] इस भार्म्यश्व–मुद्गलवाली—ऋचा के प्रसङ्ग में 'मुद्गलो मुद्गवान् मुद्गंगिलो वा मदनं गिलतीति वा मदं गिलो वा मुदं गिलो वा। भार्म्यश्वो भृम्यश्वस्य पुत्रः। भृम्यश्वो भृमयोऽस्याश्वा अश्वभरणाद्वा" [निरु० ९।२४] मुद्गल ऋषि का नाम है मुद्गवाला या मुद्ग खाने वाला या मदन अर्थात् काम भाव को पचानेवाला जितेन्द्रिय मद—गर्व का पचानेवाला गर्वरहित शान्त गा मुद—हर्ष को पचानेवाला निःस्पृह। भार्म्याश्व-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रमणशील घोड़ों वाला या वैद्युत शक्ति-सम्पन्न घोड़ों का भरण पोषण करने वाले वैद्युतशक्ति के आविष्कर्त्ता का पुत्र। यहाँ पिता का नाम भी यौगिक है।

(४) "आर्ष्टिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन्।" [ऋ० १०।९८।५] का ऋषि देवापि है, उसपर कहा है "देवानामाप्त्या स्तुत्या प्रदानेन च" [निरु० २।११] देवों की प्राप्ति, स्तुति और प्रदान से देवापि ऋषि है।

(५) "सं मा तपन्त्य····" [ऋ० १।१०५।८] इस त्रित ऋषिवाली ऋचा पर "त्रितस्तीर्णतमो मेधया बभूव" [नि० ४।६] मेधा से प्रवृद्ध त्रित ऋषि कहा।

ऋषि दयानन्द ने जो लिखा है कि मन्त्रों के ऊपर जो ऋषि नाम आये हैं वे स्मरण करने के लिए हैं उन उन ऋषियों ने मन्त्रार्थ दर्शन किया और उनका प्रचार किया इसीलिए उनके नाम हैं। ऋषि दयानन्द के कथन में यह कहीं नहीं आया कि ये उनके रूढ़ि नाम थे तब यह यौगिक नाम ही जानने चाहिये क्योंकि ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि ब्रह्मा से लेकर जैमिनिमुनि पर्यन्त जो मानते चले आये हैं वही मेरा सिद्धान्त है। उपर्युक्त यास्क आदि या निरुक्त आदि में ऋषियों के नामों को यौगिक बताया गया है इसलिए ऋषि दयानन्द के मन्तव्य में भी ऋषियों के नाम यौगिक हैं यह जानना चाहिये उन नामों को स्मरण करने की सार्थकता भी तभी है जितने भी नाम मन्त्रों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ऊपर लिखे हैं उनके किये अर्थ या व्याख्यान कहीं नहीं मिलते हैं तब उनके नाम का स्मरण करना निरर्थक हो जाता है जैसे किसी के पिता का देहान्त पुत्र के उत्पन्न होते ही हो जावे और उसका अन्य पुरुष पालन पोषण करे तो फिर उस जन्म देने वाले जिसने पालन पोषण नहीं किया उसे क्यों स्मरण करे, उसका स्मरण करना व्यर्थ है किन्तु स्मरण करना भी यौगिक होने में सार्थक है इसलिए कि वैसी उपाधि धारण करना है ऐसे वे यौगिक नाम धारण करने वाले ऋषि पूर्वकाल में हुए वर्तमान में भी हो सकते हैं और आगे भी हो सकेंगे। ऋषि दयानन्द के मन्तव्य में ऐसा मानना ही उचित है। ऋग्वेद मंडल ५ सूक्त ४४ के ऋषि दयानन्द के भाष्य में "ऋषिः — अवत्सारः काश्यप अन्ये च दृष्टलिङ्गाः —ऋषयः" यहाँ पर ऋषियों को दृष्टलिङ्ग कहना ऐतिहासिक या पूर्वकाल में हुए ऋषियों के विपरीत है क्योंकि मन्त्र के अन्दर लिङ्ग होना, ऋषि का नाम होना यौगिक या उपाधिवाचक होना सिद्ध करता है।

प्रश्न —

कहीं कहीं ऋषियों का नाम सम्बन्ध के साथ दर्शाया गया है जैसे "प्राजापत्योहिरण्यगर्भः" "भौवनो विश्वकर्मा" "दैर्घतमसः कक्षीवान्" इत्यादि यौगिक नाम होना कैसे सम्भव है?

उत्तर—

लोक में भी उपाधि सम्बन्ध मिलता है जैसे "न्यायशास्त्री,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांख्यशास्त्री, व्याकरणाचार्य, वेदान्ताचार्य" अर्थात् न्यायस्य शास्त्री, सांख्यस्य शास्त्री, व्याकरणस्य आचार्यः, वेदान्तस्य आचार्यः, ये उपाधियाँ तो विभक्ति सम्बन्धित हैं इनको तद्धित के रूप में भी देख सकते हैं "नैयायिकः शास्त्री, वैयाकरण आचार्यः" कहा जा सकता है। क्वचित् संस्कृत साहित्य में "देवानांप्रियः" आदि असमस्त उपाधियाँ मिलती हैं। हिन्दी में भी "कुत्ते की दुम" "गधे का बच्चा" आदि।

वैदिक ऋषियों में जो सम्बन्ध को लेकर वैदिक नाम दिये हैं जैसा कि पीछे बताया गया है। सम्बन्ध और सम्बन्धी दोनों ही यौगिक नाम हैं और दोनों ही किसी न किसी सूक्त व मन्त्र के ऋषि हैं जैसे—"ऋषभो वैश्वामित्रः" [ऋ० ३।१४] का ऋषि है और विश्वामित्र स्वतन्त्र ऋषि भी [ऋ० ३।३३] का है एवं "बृहद्दिव आथर्वणः" ऋषि है [ऋ० १०।१२०] का और अथर्वा भी अथर्ववेद के अनेक सूक्तों का ऋषि है।

"भार्म्यश्व मुद्गल ऋषिः [ऋ० १०।१०२] भार्म्यश्व को यौगिक बताया है।

"कुशिकस्य सूनुः .... कुशिकः क्रोशतेः शब्दकर्मण क्रंशतेर्वा स्यात् प्रकाशयति कर्मणः साधु क्रोशयिताऽर्थानिति वा [निरु० २।२५] शब्द अर्थवाले क्रुशधातु से या प्रकाश अर्थवाले क्रंश धातु से अर्थों का अच्छा प्रकाशक होने से कुशिक है उसका पुत्र, शिष्य या उससे सम्बन्ध रखने वाला कौशिक विश्वामित्र हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"औशिजः कक्षीवान्....कक्ष्यावान्—औशिज उशिजः पुत्रः" उशिग् वष्टेः कान्ति कर्मणः" [निरु० ६।११] कक्षीवान् कक्ष्यावान् कर्मठ संयमी औशिज उशिक् का पुत्र, उशिक् कान्ति अर्थवाले वश धातु से बना है। उशिक् कान्तिमान् ब्रह्मतेजोयुक्त महानुभाव हुआ।

तद्धित सम्बन्ध से पिता ही नहीं किन्तु गुरु, कुल (पितृकुल-गुरुकुल) अपितु कला विद्या आदि से निष्पन्न या उसमें व्युत्पन्न निःष्णात भी लिया जाता है ऐसे भी स्थल मिलते हैं।

किन्हीं पदार्थों के ज्ञाता एवं प्रचारक होने से उन उन नामों से भी ऋषि कहे जाते हैं जैसा कि "पुनरेहि वृषाकपे...." [ऋ० १३।८६।११] इस वृषाकपि ऋषि वाले मन्त्र में "अथ यद्रश्मिभिरभिप्रकम्पयन्नेति तद् वृषा कपिर्भवति वृषाकम्पनः" [निरु० १२।२८] किरणों द्वारा सूर्य काँपता हुआ आता है वह वृषाकपि है, वृषाकपि सूर्य का ज्ञाता भी ऋषि वृषाकपि उपाधि प्राप्त है।

ऋषि और देवता का परस्पर सम्बन्ध भी होता है और वह उपयोक्ता-उपयोज्य, ज्ञाता-ज्ञेय, प्रार्थी-प्रार्थनीय, याचक-याचनीय, साधक-साध्य, भावुक-भावनीय, उपासक-उपास्य आदि रूप में होता है जैसे—

उपयोक्ता-उपयोज्य—

२

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"या ओषधीः पूर्वा जाताः....." [ऋग्० १०।९७] का देवता ओषधि और ऋषि भिषक् ओषधि का उपयोग कर्त्ता।

ज्ञाता ज्ञेय—

"बृहस्पते प्रथमं वाचो....." [ऋ० १०।७१] का देवता ज्ञान और ऋषि बृहस्पति (उपाध्याय) ज्ञान का प्रवचन करने वाला ज्ञाता।

प्रार्थी-प्रार्थनीय—"न वा उ देवाः क्षुधमिद् वधं.... ,[ऋ१०।१७] का देवता धनान्नदानप्रशंसा और ऋषि भिक्षुक याचक—धनान्न याचनीय है। "यां मेधां देवगणाः....." [यजु० ३२।१४] का देवता परमात्मा प्रार्थनीय अर्चनीय है मेधार्थ—मेधा के लिए उससे प्रार्थना है और ऋषि है—मेधाकाम—मेधा का चाहने वाला प्रार्थी।

साधक-साध्य—

अथर्व० ११३१७८८,१०१४ का देवता सर्प, तक्षक, सर्प-विषनाशन और ऋषि गरुत्मान्—गर अर्थात् विष का उत्तम्भन करने वाला, खींचने वाला, बाहिर निकालने वाला, नष्ट करने वाला प्रयोगकर्त्ता साधक गरुत्मान्। गरुड पक्षी विष का नाशक होता है सर्प को खा जाता है, सर्प विष निवारक जन को ग्रामों में गारुड़ी—गारुड़िया कहते भी हैं।

"मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय....." [ऋ० १०।१६१] का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवता राजयक्ष्मघ्न प्रयोग और ऋषि यक्ष्मनाशन—राजयक्ष्मरोग को नष्ट करने वाला हविप्रयोगकर्त्ता साधक।

भावुक-भावनीय—

"यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं····तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु" [यजु० ३४।१–६] का देवता मन भावनीय और ऋषि शिवसङ्कल्प कल्याणकर सङ्कल्पवाला भावुक।

उपासक-उपास्य—

"उत त्वया तन्वा संवदे तत्कदा त्वन्तर्वरुणे भुवानि" [ऋ० ७।८६–८९] का देवता वरुण वरणीय उपास्य परमात्मा और ऋषि वसिष्ठ परमात्मा में अतिशय वसने वाला उपासक अस्तु।

प्रदर्शित ऋषि और देवता सम्बन्धों से स्पष्ट है कि ऋषियों के नाम रूढ़ नहीं हैं किन्तु यौगिक और उपाधि वाचक हैं। यदि ऋषियों को यौगिक उपाधि वाचक न माना जावे रूढ़ि नाम माना जावे तो निम्न आपत्तियाँ खड़ी हो जाती हैं।

(१) ऋग्वेद मण्डल ८ सूक्त ६७ का ऋषि "मत्स्या जालनद्धा ऋषयः" हैं निरुक्त में लिखा है "मत्स्यानां जालमापन्नानां-मेतदार्षं वेदयन्ते" [निरु० ६।२७] जाल में फंसी हुई मछलियों को यहाँ ऋषि बताया। रूढ़ नामवाले ऋषि—जाल में फंसी मछलियाँ नहीं हो सकतीं हैं किन्तु यहाँ भावनात्मक ऋषि हैं विषय वासना में फंसे हुए मनुष्य अपने को जाल में फंसी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मछलियों की भाँति अनुभव करते हैं जो कि भावनावशात् अर्थात् योगवशात् ही ऋषि नाम हैं रूढ़ि नाम होना सम्भव नहीं है और भी भावनारूप ऋषि अनुभूति के अनुरूप होते हैं यथा—

"देवा वै मृत्योर्बिभ्यतस्त्रयीं विद्यां प्राविशंस्ते छन्दोभिरच्छा॰ दयन्""तानु तत मृत्युर्यथा मत्स्यमुदके परिपश्येदेवं पर्यपश्यदृचि-साम्नि यजुषि ते नु विस्त्वोर्ध्वा ऋचः साम्नो यजुषः स्वरमेव प्राविशन्। ओम् स्वरः, तत्प्रविश्य अमृता जाताः" [छान्दो. १।१।४]

अर्थात् देवजन मृत्यु से भय करके ऋग् यजुः साम रूप त्रयी विद्या में प्रविष्ट हो गये—छन्दों मन्त्रों में अपने को छिपा लिया अर्थात् उनके पठन पाठन में लग गये तब भी उनको मृत्यु ने देख लिया जैसे मछुआ मछली को थोड़े जल में देख लेता है ऐसे मृत्यु ने ऋग्वेद में सामवेद में यजुर्वेद में उनके पठन पाठन में लगे हुए उनको देख लिया। फिर वे मृत्यु से भय करके ऋग्वेद के सामवेद के यजुर्वेद के स्वर में घुस गये गहरे स्वरूप में चले गये वह स्वर गहरा स्वरूप है 'ओ३म्' उसमें घुसकर वे मृत्यु से बच गये और अमर होगये। संसार सागर में मननशील जन अपने को मछलियों के समान मानते हैं तो मृत्यु के जाल में बंधे मछलियों जैसे अपने को अनुभव करते हैं पुनः वे "ओ३म्" उपास्यदेव की शरण लेते हैं 'अ-उ-म्' इति इस प्रकार जप करते हैं ये तीनों अक्षर क्षत्रिय हैं क्षत से आघात से त्राण कराने वाले हैं, 'मित्रः—वरुणः—अर्यमा' मित्र—अग्नि—"अ" है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरुण—वायु—"उ" है। अर्यमा—आदित्य—"म्" है, ये तीनों शरण करने योग्य हैं। यास्क के दिये हुए इस मन्त्र—

"जीवान्नो अभिधेतनादित्यासः पुरा हथात्।
कद्ध स्थ हवनश्रुतः॥" [ऋ० ८।६७।५]

मत्स्यानां जालमापन्नानामेतदार्षं वेदयन्ते तथा ऋग्वेद मं० ८।६७ सूक्त में "मत्स्या जालबद्धा ऋषयः" का मनुष्यों में भावनात्मक ऋषित्व है। ऐतिहासिक या वंशज रूढ़ि नाम नहीं है।

इसी प्रकार ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १० में यम यमी का संवाद है इस सूक्त में जिस मन्त्र का ऋषि यम है उसका देवता यमी है और जिस मन्त्र का ऋषि यमी है उसका देवता यम है, यम यमी दोनों ऋषिरूप में संवाद कर रहे हैं यम की ओर से यमी को "अन्यमिच्छस्वसुभगे पतिं मत्" स्वामी दयानन्द के अनुसार इस मन्त्र में नियोग की अनुमति दी गई है, यहाँ यम यमी ऐतिहासिक या वंशकृत नाम वाले ऋषि नहीं किन्तु सूक्त के अन्दर की भावनाओं को जानने—दर्शन करने वालों का नाम ऋषि समझना चाहिये तथा ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ८६ का ऋषि "वृषाकपिरैन्द्र इन्द्राणीन्द्रश्च" अर्थात् इन्द्र से सम्बन्ध रखने वाला वृषाकपि, इन्द्र और इन्द्राणी इन तीन का संवाद है। सूक्त में ज्योतिर्विषयक वर्णन सर्वसूर्यग्रहण और सब ग्रहों का सम्पात रेवती नक्षत्र पर होने का कथन है जो आदि सृष्टि में पड़ता है इस सूक्त में इन तीनों को ऋषि माना है ये ऐतिहासिक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या वंशज नाम वाले नहीं हो सकते किन्तु इनके सांवादिक विज्ञान का दर्शन करने वाले उस योग्यता को प्राप्त किये हुए यौगिक उपाधिरूप नाम के मनुष्य कहलायेंगे।

इसी प्रकार ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ९५ में पुरुरवा और उर्वशी का संवाद आदर्श गृहस्थचर्या के लिए है जिस मन्त्र का ऋषि पुरुरवा है उस मन्त्र का देवता उर्वशी है और जिस मन्त्र का ऋषि उर्वशी है उसका देवता पुरुरवा है इस प्रकार (पुरुरवा और उर्वशी सम्वाद में ऐतिहासिक या वंशज नाम वाले मनुष्य ऋषि नहीं हो सकते किन्तु संवाद की भावना का दर्शन करने वाले योगवशात् नामधारण करने वाले मनुष्य ऋषि हो सकते हैं।

इसी प्रकार यजुर्वेद अध्याय ३२ मंत्र ३ में "न तस्य प्रतिमाऽस्ति यस्यनाम महद्यशः" का ऋषि स्वयम्भु ब्रह्म है ऐसा नाम ऐतिहासिक या वंशज नहीं हो सकता किन्तु स्वयम्भु ब्रह्म के ज्ञान को अपने अन्दर ढालने वाला कोई उपासक जन तद्धर्मवान् योगवशात् ऋषि हो सकता है।

इसी प्रकार ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १२९ में "नासदासीन्नो सदासीत्....." इस सूक्त का देवता भाववृत्त है जिसमें उत्पन्न होने वाली वस्तुओं का वृत्तान्त है इसका ऋषि प्रजापति अर्थात् सब उत्पन्न होने वाली वस्तुओं का स्वामी या पालक कोई ऐतिहासिक या वंशज नाम का ऋषि नहीं किन्तु उत्पत्ति विज्ञान का स्वामी द्रष्टा का योगवशात् नाम उपाधिरूप में है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० आचार्य प्रियव्रत वेद
वाचस्पति
स्मृति संग्रह

इसी प्रकार ऋग्वेदमण्डल ७ सूक्त ३३ का ऋषि "संस्तवो-वसिष्ठस्य सपुत्रस्येन्द्रेण वा संवादः" है, यहाँ संस्तव और संवाद को ऋषि कहा गया है यह भी नाम ऐतिहासिक या वंशज नहीं हो सकता किन्तु उस संस्तव या संवाद को समझने जानने वाला योगवशात् नाम ऋषि का है।

9304

ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १५१ का श्रद्धासूक्त "श्रद्धयाग्निः—समिध्यते" का देवता श्रद्धा है और ऋषि भी श्रद्धा है, यह नाम भी ऐतिहासिक या वंशज नहीं किन्तु श्रद्धा की अनुभूति, ज्ञान, दर्शन—और प्रचार के कारण योगवशात् या उपाधिरूप में हो सकता है।

ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १६१ "मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्" इस सूक्त का देवता राजयक्ष्मघ्नम् और ऋषि यक्ष्मनाशनः है यक्ष्म रोग को नष्ट करने वाला ऐसा ऐतिहासिक या वंशज नाम वाला नहीं हो सकता किन्तु यक्ष्म रोग को नष्ट करने के विज्ञानवाला वैसी योग्यता सम्पन्न उपाधि को प्राप्त मनुष्य हो सकता है।

अथर्ववेद के सर्पविषनाशन देवता वाले मन्त्रों और सूक्तों का ऋषि गरुत्मान् है, गरुत्मान् कहते हैं, गरम्-विषम्-उत्तम्नाति, इति गरुत्मान्, अर्थात् विष को उखाड़ फेंकने वाला या स्वाधीन करने वाला सर्प विष चिकित्सक मनुष्य हुआ। गरुत्मान् गरुड़ पक्षी को कहते हैं और गरुड़ पक्षी सर्प बिच्छु आदि विषैले

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्तुओं को खा जाता है स्वाधीन कर लेता है। ग्रामों में सर्प विष चिकित्सक को गरुड़ी या गारुडिया कहते हैं इस प्रकार गरुत्मान् ऋषि ऐतिहासिक या वंशज प्रसिद्ध नाम नहीं किन्तु सर्प विष चिकित्सा करने वाले ज्ञान द्रष्टा योग्यता पूर्ण उपाधि वाचक नाम है।

यास्क ने अपने निरुक्त अ० १० स० ४२ में एक आश्चर्य से बात लिखी है कि परुच्छेव ऋषि का लक्षण कि जिस मन्त्र का एक पाद पुनः दोहरा दिया जावे अर्थात् दो बार पढ़ा जावे उसमें परु अर्थात् ग्रन्थि लगादि जावे उस मन्त्र का ऋषि परुच्छेप होता है।

ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १२९ मन्त्र ६ इस मन्त्र में "मन्म रेजति" यह अभ्यास या पुनरुक्ति है इस पर यास्क कहते हैं अभ्यासे—भूयांसमर्थं मन्यन्तेयथाहो दर्शनीयाहो दर्शनीयेति। तत् परुच्छेपस्यशीलम्। परुच्छेप ऋषिः। पर्ववच्छेपः"। यह नाम भी ऐतिहासिक या वंशज नहीं बैठता किन्तु मन्त्र में कहे पुनरुक्त वचन के विशेष अर्थ को जानने वाला मनुष्य योगवशात् नाम ही हो सकता है।

ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त १८४ देवता गर्भार्थाशीः—गर्भ के लिए आशीर्वाद है, इसका ऋषि त्वष्टा गर्भकर्त्ता विष्णुर्वा—

विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु।
आ सिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते॥"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भ को धारण कराने वाला त्वष्टा या विष्णु नाम ऐतिहासिक या वंशज नहीं है किन्तु जो गर्भाधान गर्भस्थापन करानेवाली ओषधि और चिकित्सा को जानने वाला हो उसका योग्यतावश ऋषिनाम है। इस प्रकार ऋषि नाम गुणवशात् यौगिक उपाधि वाचक ज्ञान और प्रचार के कारण नाम हैं, ऐतिहासिक या वंशज रूढ़ नाम नहीं। लोक में देखते हैं कि जिनके नाम घर के भिन्न हैं और प्रसिद्ध नाम किसी बात के प्रचार करने से हो जाते हैं। गुरुकुल काङ्गड़ी में बात बात में भगवन् शब्द कोई बोला करते थे उनका नाम भगवन् प्रसिद्ध होगया घर के नाम का पता नहीं रहा। इसी प्रकार डी० ए० वी० कॉलेज देहरादून में एक महानुभाव श्रीमान्‌जी शब्द बहुत अधिक बोला करते थे वे श्रीमान् जी के नाम से ही प्रसिद्ध हो गये। एक सज्जन 'महाशय' शब्द बहुत बोला करते थे वे महाशय नाम से प्रसिद्ध होगये।

महात्मा नारायण स्वामी जी के पास शाहजहाँपुर में प्रातःकाल ही एक छोटा सा बालक गया और कहने लगा कि महाराज आप धर्म का उपदेश देते हो और मुझे धर्म से चिढ़ है मैं आपकी टांग में लोहे की यह लम्बी कील मारने आया हूँ। महात्माजी ने कहा सचमुच तुम मेरे कील मारने आये हो तो बालक ने हाँ में उत्तर दिया। तब महात्माजी ने कहा कि तुम मुझे किसी प्रकार छोड़ भी सकते हो? बालक ने कहा हाँ मुझे आप यह जेब घड़ी दे दीजिये तो मैं आपको छोड़ दूँगा। महात्मा जी ने घड़ी देदी और बालक चलने लगा तब महात्मा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी ने चलते समय बालक को कहा कि यह घड़ी तो लेते जाओ पर हमारी एक बात मानते जाओ कि तुम निर्भय होकर इतना सत्य बोले हो इसलिये तुम अपना नाम सत्यपाल रखलो। बालक प्रसिद्ध ब्राह्मण वंश का था। घड़ी तो उसके पिता ने वापस कर दी परन्तु बालक का नाम सत्यपाल प्रसिद्ध होगया। बड़ा होने पर सत्यपाल नाम से आर्यसमाज शाहजहाँपुर का उच्चाधिकारी रहा उसका घर का नाम कोई नहीं जानता। यह घटना स्वयं सत्यपालजी ने अपने मुख से मुझे सुनाई। इस प्रकार गुणानुरूप नाम हो जाया करते हैं। अतः मन्त्रों के ऋषि नाम यौगिक उपाधिरूप में हैं ऐतिहासिक वंशज या रूढ़ नहीं हैं जैसे कि पूर्व कह चुके हैं—

"ऋषीणां नामधेयानि याश्च वेदेषु दृष्टयः।
शर्वर्यन्ते प्रसूतानां तान्येवैभ्यो ददात्यजः॥" (महाभारत)

ऋषियों के नाम और जो वेदों में उनकी मन्त्रदृष्टियाँ हैं, प्रलय के अनन्तर आरम्भ सृष्टि में परमात्मा देता है—प्रसिद्ध करता है, अतः मन्त्रों के ऋषि न मन्त्रों के कर्त्ता हैं और न ऐतिहासिक या वंशज दिये हुए नाम हैं किन्तु मन्त्र दर्शन, मन्त्र ज्ञान के अनुरूप योग्यता वशात् यौगिक और उपाधि वाचक हैं।

हम इससे भी और आगे जाना चाहते हैं जहाँ उपाधिवाद भी गौण होजाता है, कर्तृवाद की तो क़था ही क्या। हम उसको "आर्षवाद" के नाम से कहते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्षवाद

विद्वानों ने जितनी भी परिभाषाएँ निर्धारित की हैं उन सभी का मूल संसार में उपलब्ध होता है बिना मूल के परिभाषा बन नहीं सकती, इसी तरह संस्कृतसाहित्य में परिभाषाओं का भी मूल अवश्य है जैसे—"तदेवार्थ मात्रनिर्भासं स्वरूपशून्य-मिव समाधिः" [योग० ३।३] समाधि किसको कहते हैं यह बात इस परिभाषासे खाली है, परन्तु इस परिभाषा का मूल जो शब्दशास्त्रकृत 'सम्—आ—धा + कि' का समाधान अर्थ-रूप है वह नष्ट नहीं किया जा सकता। योगशास्त्र से भिन्न शास्त्रों में उसका मूल अर्थ लिया ही जावेगा "जातेश्च परेण प्रयुज्यमानायाः सुलभः समाधिः" [न्याय वात्स्यायन० १।१।१] इसी प्रकार निरुक्त में दी हुई "ऋषिर्दर्शनात्" परिभाषा का मूल जो शब्द शास्त्रकृत 'ऋष् + कि' का ज्ञान गमन प्राप्ति से युक्त चेतन हो तो ज्ञाता उपयोक्ता, जड़ हो तो प्रेरक या कार्य में कारणता से प्राप्त उपादान अर्थरूप नष्ट नहीं किया जा सकता है। निरुक्त शास्त्र से भिन्न मन्त्रों में पठित ऋषि शब्द या उसके विशेष वाचकों में मूल अर्थ लिया ही जावेगा। नैगमपाठ में परिभाषा को स्थान नहीं दिया जा सकता। वहाँ का ऋषि परिभाषा से भिन्न है अतएव पारिभाषिक न होकर वहाँ ऋषियों का स्वतन्त्र स्वरूप है यही ऋषियों का आर्षवाद कहलाता है। इस वाद में ऋषि विश्व की मूल शक्तियों (Forces) के नाम हैं जो पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौः में भी काम करती हैं परञ्च

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिदेव, अध्यात्म और अधिभूत भी जिनका स्थान है। ऋषि नाम की विश्व की मूल शक्तियाँ सृष्टि के उत्पत्तिसमय सबसे प्रथम उत्पन्न घूमते हुए अग्नि तत्त्व से उत्पन्न होती हैं "अग्ने···भृमिरस्यृषिकृत्" [ऋ० १।३१।१६] एवं पृथिवीस्थान की अग्नि से पृथिवीस्थान के ऋषि, अन्तरिक्षस्थान के ऋषि अन्तरिक्ष्य अग्नि (विद्युत्) से द्युस्थान के ऋषि सूर्याग्नि से पैदा होते हैं। यही प्रक्रिया लघु क्षेत्र में भी घटा सकते हैं। ऋषि विश्व के मूल पदार्थ हैं वेद की भी इसमें स्पष्ट साक्षी है—

"त आयजन्त द्रविणं समस्मा ऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना।
असूर्ते सूर्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि॥"
[ऋ० १०।८०।४]

"यां त्वा पूर्वे भूतकृत ऋषयः परिवेधिरे" [अथर्व० ६।१३।३।५]

उक्त मन्त्रों में स्पष्ट ही ऋषियों को 'पूर्व ऋषयः, ये भूतानि समकृण्वन्' तथा 'भूतकृतः' वस्तुमात्र के व्यक्तिभाव के कारण कहा है। अतएव देवता इनके फलस्वरूप या परिणाम रूप हैं ऐसा समझना चाहिये।

वेदों में कुछ नाम ऋषिवाचक हैं और कुछ देवतावाचक हैं कुछ उभयवाचक अर्थात् देवता और ऋषि दोनों के वाचक हैं इस प्रकार इन की तीन कोटियाँ हैं जैसे गेहूँ आदि बीज सब खाद्य पदार्थों के परमकारण हैं और उनका पिष्ट भाग (चूर्ण) बीजों से बना हुआ होने से उनका कार्य है पुनः उससे रोटी आदि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाद्यवस्तुएं केवल कार्य हैं इसी प्रकार विश्व के पदार्थ जो मूल रूप हैं वे केवल ऋषि हैं और उन ऋषियों के देवता जो अन्य देवताओं के ऋषि हैं अर्थात् कारण हैं वे मध्यम ऋषि और मध्यम देवता हैं। इन मध्यम ऋषियों के देवता केवल देवता हैं क्योंकि इन देवताओं के फिर देवता नहीं होते एवं विश्व के क्षेत्रभूत पदार्थों के तीन विभाग हुए जिनमें (१) केवल ऋषि (२) मध्यम ऋषि या मध्यम देवता (३) केवल देवता, जो धर्म अवयव में अंशतः रहता है वह समूह में भी प्रवृद्ध होता ही है, पदात्मक व्यक्ति शब्द है उसका समूह वैदिक वाक्य बन छन्द कहलाता है। शब्द का वस्तु-आत्मा अर्थ है, वैदिक वाक्य में वह अर्थपति देवता के रूप में रहता है। शब्द और अर्थ में एक सम्बन्ध नियत है जिसके अधीन शब्द भी है और अर्थ भी एवं वैदिक वाक्य में छन्द और देवता को स्वाधीन रखने वाला पदार्थ ऋषि कहलाता है। जैसे व्यक्ति-शब्द में वर्त्तमान हुआ सम्बन्ध अर्थ-रूप वस्तु-आत्मा का परिचायक है एवं मन्त्र का ऋषि भी उसके अर्थ-प्रतिरूप देवता का परिचायक है यह निश्चित ही समझना चाहिये। इस अवस्था में ऋषि कोई मन्त्रों के बनाने वाला मनुष्य नहीं और न पश्चात्कालीन ज्ञाता ऐतिहासिक या वंशज परन्तु ऋषि वह पदार्थ है—जिसका देवता से नित्य सम्बन्ध है। जैसे शब्द, अर्थ और सम्बन्ध पदात्मक व्यक्ति में नित्य हैं एवं मन्त्र में छन्द, देवता और ऋषि भी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्य हैं अतएव ऋषियों की नित्यता "ऋषीणांनामधेयानि" इस महाभारत के श्लोक में भी दर्शाई हुई है।

ऋषि देवता की भाँति विश्व के भौतिक आदि उपयोगी पदार्थ हैं, केवल भेद इतना ही है कि इनका परस्पर कार्यकारणादि सम्बन्ध है जैसा अभी कह आये हैं, अन्य बातें समान हैं। यही बात प्रथम स्पष्ट रीति से दिखलाते हैं :—

१—पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौः स्थानों के भेद से देवताओं के तीन गण हैं एवं ऋषियों के भी तीन गण हैं :

ऋषिः—त्रय ऋषिगणाः।

गोविथ पवस्व वसुविद्धिरण्यविद्रेतोधा इन्द्रो भुवनेष्वर्पितः *

[साम० उ० प्र७ ३।२।१]

सूर्यरश्मियों को प्रियमेधा ऋषि कहा गया है—

वयः सुपर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः।

अपध्वान्तमूर्णु हि पूर्द्धि चक्षुर्मुमुग्ध्यस्मान्निधयेव बद्धान् ॥

[ऋ० १०।७३।११]

---

* कर्तृवाद पक्ष के मानने वालों को विचारना चाहिये कि क्या सब ऋषिगणों ने मिलकर इस मन्त्र को बनाया ? क्या वे सब एक समय में ही थे ? परन्तु कर्तृवाद के मानने वाले तो यह पक्ष स्थापित करते हैं कि भिन्न भिन्न कालों में कई सौ वर्षों तक मन्त्र बनते रहे, फिर क्या किसी एक समय में ऋषियों ने इकट्ठे होकर इस मन्त्र को बनाया ? क्या इस बात को कोई विद्वान् मान सकता है ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ—प्रियमेधा नाम के ऋषि वेग में सुन्दर पक्षियों के समान हैं वे इन्द्र की सेवा में उपस्थित हुए प्रार्थना करते हैं कि आप हमें पाशबद्ध हुए जैसों को छोड़कर विश्व में अपनी दर्शनरश्मि को फैलादें और संसार से अन्धेरे को दूर करदें।

उक्त मन्त्र में "प्रियमेधाः" नाम के ऋषि सूर्य की किरणें हैं। यही बात निरुक्त में भी इस मन्त्र की व्याख्या में स्पष्ट की हुई है—

"वयो वेर्बहुवचनम्। सुपर्णाः सुपतना आदित्यरश्मय उपसेदुरिन्द्रं याचमाना अपोर्णुह्याध्वस्तं चक्षुः। चक्षुः ख्यातेर्वा चष्टेर्वा। पूर्द्धि पूरय देहीति वा मुञ्चास्मान् पाशैरिव बद्धान्"
[निरु० ४।३]

उपर्युक्त मन्त्र और निरुक्त के प्रमाण से यह बात स्पष्ट होगई है कि ऋषि से पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्यौः स्थानों के पदार्थों का ग्रहण किया जा सकता है जैसे निरुक्तकार ने द्यु स्थान के पदार्थ रश्मियों को "प्रियमेधा" ऋषि कहा है।

ऋग्वेद मण्डल १० सूक्त ८६ में वृषाकपि ऋषि को निरुक्तकार यास्क सूर्य कहता है—

पुनरेहि वृषाकपे सुविता कल्पयावहै।
य एष स्वप्ननंशनोऽस्तमेषि यथा पुनर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः।
[ऋ० १०।८६।२१]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अथ यद्रश्मिभिरभिप्रकम्पयन्नेति तद् वृषाकपिर्भवति वृषा-कम्पनः....स्वप्ननंशनः स्वप्नान्नाशयत्यादित्य उदयेन सोऽस्तमेषि यथा पुनः सर्वस्माद् इन्द्र उत्तरस्तमेतद् ब्रूम आदित्यम्। [निरुक्त १२।२८] "वर्षिता चावश्यायानां कम्पनश्च भूतानाम्" [दुर्गः]

विरूपास इदृषयस्त इद् गम्भीरवेपसः।
ते अङ्गिरसः सूनवस्ते अग्नेः परिजज्ञिरे [यजु० १।६२।५]
"बहुरूपा ऋषयस्ते गम्भीरकर्माणो वा गम्भीरप्रज्ञा वा ते अङ्गि-रसः पुत्रास्ते अग्नेरधिजज्ञिरे इत्यग्निजन्म" [निरु०११।१७]
"अग्नित्वमापन्नस्याङ्गिरसोधिसकाशाद ये जज्ञिरे"[दुर्गाचार्यः]

अर्थ—विरूप ऋषि गम्भीर कर्मवाले हैं या वे गम्भीर-प्रज्ञा अर्थात् आश्चर्यप्रज्ञा के निमित्त हैं। वे अग्नि के पुत्र हैं क्योंकि अग्नि से उनकी उत्पत्ति होती है।

विदित हो कि यह विरूप पार्थिव अग्नि से उत्पन्न नहीं होते हैं। अग्नि से अवश्य उत्पन्न होते हैं किन्तु जब द्युस्थान अभ्र-मण्डल या वृष्टि की मन्दधारा में उक्त अग्नितेज छनता है—प्रतिभासित होता है तब वे विरूप नाम के ऋषि उत्पन्न होते हैं। यह बात अगले मन्त्र में प्रदर्शित की है—

ये अग्नेः परिजज्ञिरे विरूपासो दिवस्परि।
नवग्वो दशग्वो अंगिरस्तमाः सचा देवेषु मंहते॥

[ऋ० १०।६२।६]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभ्रमण्डल या मन्दवृष्टिधारा में सूर्याग्नि के तेज से भिन्न भिन्न रंग की वृत्ताकार प्रकाशपंक्तियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनको लोक में इन्द्रधनुष भी कहते हैं यह भिन्न भिन्न रंग की प्रकाश पंक्तियाँ "विरूपा ऋषयः" बहुरूप वाले या भिन्न भिन्न रंग वाले आकाश में जलकणों के आश्रित अग्निधर्म से अन्वित प्रकाशमान हैं।

यं वै सूर्यं स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः।
अत्रयस्तमन्वविन्दन् नह्यन्ये अशक्नुवन्॥ [ऋ० ५।४०।९]

अर्थ—जिस सूर्य को स्वर्भानु* अर्थात् पृथिवी और सूर्य के मध्य में आये हुए चन्द्र छायारूपराहु ने छिपा दिया या छिपा देता है उस सूर्य को 'अत्रयः' भौमाग्निधाराओं ने प्राप्त किया या करती हैं। क्योंकि भौमाग्निधारायें पृथिवीगोल से बाहर भूकक्षा या भूपरिमण्डल तक अपना सञ्चार किया करती हैं अतः वे आकर्षण करने वाली सूर्यरश्मियों को प्राप्त करती हैं, अन्य पृथिवीस्थ प्राणी तथा जड़ पदार्थ पृथिवीगोल को छोड़कर अलग नहीं हो सकते। अतएव वे सूर्य या सूर्यप्रकाश को प्राप्त नहीं कर सकते। पृथिवीगोल के एक तरफ रात है वहाँ

---

* 'स्वर्दिवि-एवभानुर्यस्मात्सस्वर्भानुः' द्यौ में ही भानु अर्थात् सूर्य जिस कारण से है अन्यत्र नहीं दीखता है वह स्वर्भानु है, सूर्यग्रहण में सूर्य द्यु स्थान में अवश्य होता है अन्यत्र नहीं दीखता है अतएव उस आच्छादक का नाम स्वर्भानु है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य किरणों का साम्मुख्य नहीं है इधर सूर्यग्रहण होने से चन्द्र छाया मध्य में आजाने से सूर्य का साम्मुख्य इधर भी न रहा तब पृथिवीगोल कैसे ठहरा हुआ है इसके लिए वेद ने कहा कि "अत्रयस्तमन्वविद्वन्" इस मन्त्र का ऋषि अत्रि है और निरुक्तकार यास्क ने अत्रि का अर्थ भौमाग्नि किया है जो पृथिवी के अन्दर बाहर विद्यमान है।

ऋबीसे अत्रिमश्विनावनीतमुन्निन्यथुः सर्वगणं स्वस्ति [ऋ० १।११६।८] इस पर निरुक्त ने लिखा है "ऋबीसे अत्रिः पृथिव्यामग्निः" [निरु० ६।३६] और इसी मन्त्र का [साम० पू० ६।७।११] में ऋषि 'अत्रिर्भौमः' दिया है। इस कथन से भी अत्रि का अर्थ भौमाग्नि होता है।

मन्त्रों में आये ऋषियों के नाम भौतिक वस्तुओं के भी हैं यह दर्शा दिया गया। अब यह एक आश्चर्य की बात है कि अन्य वस्तु के समान परमात्मा को भी मन्त्र का ऋषि बताया गया है यथा—

पुंसि वै रेतो भवति तत् स्त्रियामनुषिच्यते।
तद् वै पुत्रस्य वेदनं तत्प्रजापतिरब्रवीत्॥ [अथर्व० ६।११।२]

ऋषि :—प्रजापतिः। देवता—रेतो वा रेतः सिञ्चनं वा। इस सूक्त का ऋषि प्रजापति अर्थात् परमेश्वर है। उस प्रजा-स्वामी—परमेश्वर ने केवल मनुष्यों में ही नहीं किन्तु पशु आदि सभी प्राणियों के अन्दर यह भावना उत्पन्न कर रखी है कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर अपने वीर्य को नारी में डाल कर प्रजावृद्धि किया करें, अतएव यहाँ उक्त भावना का निर्वर्तक या नियम का कर्त्ता ऋषि प्रजापति परमात्मा है।

इस प्रकार ऋषि मीमांसा से सिद्ध हुआ कि ऋषि मन्त्रों के कर्त्ता नहीं हैं और न ऐतिहासिक वंशज रूढ़िनाम हैं किन्तु योगवशात् योग्यताप्राप्त यौगिक एवं उपाधिवाचक नाम हैं।

(१) इस हमारे विवेचन से श्री स्वामी वेदानन्दजी तीर्थ ऊँचे वैदिक विद्वान् सहमत थे उनके वचन हमारी पूर्व लिखित पुस्तक "वेद में इतिहास नहीं" पर सम्मतिरूप में लिखा है कि— "पुस्तक के विचार अधिकतर मौलिक और अनूठे हैं। ऋषि-निर्वचनप्रसङ्ग में कई वाद सर्वथा नये और अपूर्व हैं"।

(२) श्री पण्डित भगवद्दत्त रिसर्च स्कालर लाहौर वालों ने भी मौखिक रूप में कहा था कि आपने ऋषियों के सम्बन्ध में नये विचार हमें दिये हैं।

(३) श्री अमर स्वामीजी ने संन्यास से पूर्व मोहनाश्रम हरिद्वार में कहा था कि आपका ऋषिविषयक वाद वेद से इतिहास को हटाने में मानने योग्य है विना इसके माने मन्त्रों में आये ऋषियों के नाम इतिहास के सन्देह को नहीं हटा सकता।

(४) श्री आचार्य विश्वश्रवाजी ने भी प्रसङ्गवश कहा था कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषियों का भी मन्त्रों के साथ कोई नित्य सम्बन्ध होना ही चाहिये जैसा कि आपने दर्शाया है।

(५) श्री पं० शिवशंकरजी काव्यतीर्थ ने अपनी एक पुस्तक "वैदिक इतिहासार्थ निर्णय" में कुछ अंश में इस विषय को प्रदर्शित किया है।

(६) अनेक आर्य विद्वान् मन्त्रों के व्याख्यान करते हुए उनके ऋषियों के यौगिक नामों की व्याख्या करते रहे और करते हैं यथा—श्री पं० चमूपतिजी, श्री पं० हरिशरणजी सिद्धान्तालङ्कार, श्री पं० सुखदेवजी दर्शनाचार्य इत्यादि।

'इत्यलं विद्वत्सु किं वहुना'

R14.3,PAR-M
9304

9304

पं० आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति स्मृति संग्रह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL K... LIBRARY
D.te
F A P
Any other
Checked
Sharma 6.11.03

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुद्रक : शिरीश चन्द्र शिवहरे, एम. ए.,
दी फाइन आर्ट प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर
प्रकाशक : स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक, विद्यामार्तण्ड,
आर्यवानप्रस्थाश्रम, ज्वालापुर जि. सहारनपुर ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar